# ओसियां

डा० ब्रजेन्द्रनाथ शर्मा

ओसियाका वर्तमान ग्राम जोधपुरसे ३२ मील उत्तर-पश्चिममें स्थित है। प्राचीन शिलालेखों एवं प्रशस्तियोंमें इसका नाम उपेश, उपकेश, उवसिशल आदि मिलता है। ओसियाके प्राचीन इतिहासके बारेमें विशेष जानकारी प्राप्त नहीं है; परन्तु इतना ज्ञात है, कि आठवीं शताब्दीमें यह प्रतिहार साम्राज्यमें था। प्रतिहारोंके समयके बने लगभग एक दर्जन मन्दिर आज भी वहाँ विद्यमान हैं, जो उस समयकी उच्चतम भवन निर्माण कलाके परिचायक हैं। प्रतिहारोंकी शक्तिका ह्रास हो जाने पर ओसियां विशाल चौहान साम्राज्यका एक अंग बन गया था। बारहवीं शताब्दीके उत्तरार्धमें यह चौहान राजा कुमार सिंहके शासनमें था। इस समय तक यह एक विशाल नगरके रूपमें परिवर्तित हो चुका था और इसकी सीमायें दूर-दूर तक फैल गई थीं। उत्थानके बाद पतन प्रकृतिका शाश्वत नियम है। यही हाल ओसियांका भी हुआ।[1] उपकेशगच्छप्रबन्ध'से विदित होता है कि तुर्की सेना इस स्थानसे सन् ११९५में होकर गुजरी और उसने इस महत्त्वपूर्ण एवं सुन्दर नगरको नष्ट कर डाला। यहाँके निवासी ओसवाल जैनी भी इसे छोड़कर दूर-दूरको पलायन कर गये।

मध्य प्रदेशमें स्थित खजुराहोकी भाँति ओसियां भी स्थापत्य एवं मूर्तिकलाके लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। खजुराहोकी भाँति यहाँ भी हिन्दू एवं जैन मन्दिर हैं। ओसियाँके कई मन्दिर तो खजुराहोंके मध्यकालीन मन्दिरोंसे कई शताब्दी प्राचीन हैं। उत्तरी भारतमें एक ही स्थान पर इतने अधिक मन्दिरोंका समूह खजुराहोके अतिरिक्त उड़ीसामें भुवनेश्वरमें ही प्राप्त है। परन्तु ओसियाँमें ही पंचायतन मन्दिरोंकी शैली सर्व प्रथम यहाँके हरिहर मन्दिर प्रस्तुत करते हैं। इन पर उत्कीर्ण देव प्रतिमाओंका अब हम संक्षेपमें वर्णन करेंगे।

## हरिहर मन्दिर नं० १ ( चित्र १ )

यह मन्दिर ओसिया ग्रामके बाहर अलग स्थित है। मन्दिरके गर्भगृहमें कोई प्रतिमा नहीं है, परन्तु द्वार-शीर्षके ऊपर गरुड़ारूढ़ विष्णुकी प्रतिमा है। इसके नीचे चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु तथा केतु आदि नवग्रहोंका अंकन है। द्वार शाखाओं पर बेल-बूटे, नाग-दम्पतियों तथा नीचे गंगा व यमुना का अपनी सेविकाओंके साथ चित्रण है। इसके बांई ओर ही भीगी वेणियोंसे जल निचोड़ती एक सुन्दरी विशेष रूपसे दर्शनीय है। इस मन्दिरके बाह्य भाग पर नीचे वाली लाईनमें अपने वाहन भैंसे पर विराजमान तथा हाथमें खट्वांग लिये यमकी मूर्ति है। इससे आगे गणेशकी प्रतिमा है। मध्यमें त्रिविक्रमकी कलात्मक प्रतिमा है जिसमें उनका बायां पैर ऊपर उठा हुआ है। इससे आगे चन्द्रकी बैठी मूर्ति है, जिनके शीर्षके पीछे अर्द्ध-चन्द्र स्पष्ट है। अगली ताखमें अग्निकी मूर्ति है, जिनके पीछेसें ज्वाला निकल रही है। यम अपने वाहन मेढे पर विराजमान है। इस मन्दिरके पीछे ऐरावत हाथी पर बैठे इन्द्र हैं और मध्यमें विष्णु तथा शिवकी सम्मिलित प्रतिमा हरिहरकी है ( चित्र २ )। यह सुन्दर प्रतिमा कलाकी दृष्टिसे अनुपम है। इनके दाहिनी ओर त्रिशूलपुरुष तथा नन्दि और बाईं ओर गरुड़ है ( चित्र ३ )। इनसे आगे सूर्यकी स्थानक तथा



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

नन्दि पर बैठे शिवकी मूर्तियाँ हैं। मन्दिरके दाहिनी ओर कुवेरकी मूर्ति है। इसके बाद महिषासुरमर्दिनीकी चर्तुभुजी प्रतिमा है। इन्होंने एक हाथसे महिषमें त्रिशूल घुसेड़ रखा है तथा दूसरे हाथसे उसकी पूँछ पकड़ रखी है। इस आशयकी मूर्तियां मथुरासे भी प्राप्त हुई हैं। मध्यमें भगवान् विष्णुके नरसिंह अवतारकी मूर्ति है, जो गोदीमें लेटे दानव हिरण्यकशिपुका पेट फाड़ रहे हैं। इनके आगे वाली ताखमें बहुमुखी ब्रह्माकी मूर्ति है, परन्तु इसमें महत्त्वपूर्ण यह है कि इनके दाढ़ी नहीं है, जैसा सामान्यतः ब्रह्माकी मूर्तियोंमें देखनेको मिलता है। इनके साथ दो दिक्पालोंकी मूर्तियां हैं, जो काफी खण्डित हो गई हैं।

इस मन्दिरके ऊपर वाली पंक्तिमें श्रीकृष्णके जीवनसे सम्बन्धित अनेक दृश्य उत्कीर्ण हैं, जिनका अनेक वैष्णव पुराणों जैसा कि भागवत पुराण आदिमें विस्तृत वर्णन मिलता है। इन दृश्योंमें कृष्ण जन्म, पूतना-वध, शकट-भंग, कालिय-दमन, अरिष्टासुर-वध, वत्सासुर-वध, कुवलयापीड-वध, गोवर्धनधारी कृष्ण, आदि अनेक दृश्य अंकित हैं।

हरिहर मन्दिर नं० १ के चारों ओर एक-एक लघु देवालय है, जिसमेंसे एक तो पूर्ण रूपसे नष्ट हो गया है। इन पर बनी मूर्तियोंमें कंकाली महिषासुर-मर्दिनी तथा शृङ्गार-दुर्गा विशेष रूपसे उल्लेखनीय हैं। १२ भुजाओं वाली शृङ्गार दुर्गा जो सिंहवाहिनी है, अपने एक हाथसे मांग निकाल रही है तथा बायें हाथसे पैरमें पायल पहिन रही हैं। इस आशयकी अन्य मूर्तियों आबानेरी तथा रोडासे भी प्राप्त हुई है, जो सभी समकालीन ( ८ वीं शती ईसवी ) हैं। मुख्य मन्दिरके पीछेके बाईं ओर वाले लघु देवालयमें सूर्यकी स्थानक तथा सूर्य व संज्ञाके पुत्र अश्वारोही रेवंतकी भी कलात्मक प्रतिमायें हैं। पीछेके दाहिनी ओर वाले लघु देवालय पर स्थानक विष्णु तथा गरुड़ासन विष्णुकी मूर्तियां विशेष महत्त्वकी हैं। मुख्य मन्दिरके सामने कौनों पर नृत्य गणपति एवं बैठे कुवेर की मूर्तियां हैं, जो सुख एवं सम्पदा की द्योतक हैं। इसी मन्दिरके बाईं ओर बुद्धावतारकी ध्यानमुद्रामें मूर्ति है।

## हरिहर मन्दिर नं० २

इस मन्दिरके पार्श्व भाग पर भी कृष्णलीलाके विभिन्न दृश्योंके अतिरिक्त, अष्ट-दिक्पाल, गणपति, त्रिविक्रम, विष्णु, हरिहर, सूर्य, शिव, महिषासुरमर्दिनी, नरसिंह भगवान् एवं ब्रह्मादिकी मूर्तियां हैं। यह भी पञ्चायतन प्रकारका मन्दिर था। यहीं पर हमें शिव-पार्वतीके विवाह 'कल्याण सुन्दर'का दृश्य देखनेको मिलता है, जैसी कि प्रतिमायें कामां ( भरतपुर ), कन्नौज, तथा अलोरा आदि में स्थित हैं।

## हरिहर मन्दिर नं० ३

इस मन्दिर पर भी उपर्युक्त वर्णित दोनों मन्दिरोंकी तरह न केवल कृष्णलीलाके अनेक दृश्य मिलते हैं, वरन् अष्ट-दिक्पाल, शिव, नरसिंह, त्रिविक्रम, सूर्य, गणेश व महिषासुरमर्दिनीकी भी मूर्तियां देखनेको मिलती हैं।

मन्दिर नं० ४ एवं ५ में मूर्तिकला पहिले की ही तरह है। मन्दिर नं० ४ में सबसे ऊपरी भागमें विष्णुकी खड़ी प्रतिमा है। मन्दिर नं० ५ ओसियांमें बनी बावड़ीके समीप है। इस पर भी दिक्पालोंके अतिरिक्त गणेश, सूर्य, विष्णु एवं महादानवका विनाश करती महिषासुरमर्दिनीकी प्रतिमायें हैं।

## सूर्य मन्दिर

सूर्य पूजा राजस्थानमें विशेष रूपसे प्रचलित थी, जैसा कि वहाँके प्राचीन मन्दिरों एवं प्राप्त प्रतिमाओंसे विदित होता है। ओसियांका सूर्य मन्दिर जो १० वीं शतीमें निर्मित हुआ प्रतीत होता है, कलाकी दृष्टिसे वहाँके सभी मन्दिरोंमें श्रेष्ठ है। परन्तु अभाग्यवश इसके गर्भगृहमें भी सूर्यकी प्रतिमा नहीं रह पाई



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

है। द्वारशाखाओं पर बनी गंगा व यमुनाकी मूर्तियां भी प्रतिहारकालीन कलाका श्रेष्ठ उदाहरण है। यदि इस मन्दिरका निरीक्षण बाईं ओर से आरम्भ करें, तो सर्व प्रथम सर्प-फणोंके नीचे खड़े बलरामकी मूर्ति मिलेगी। इसके बाद दिक्पाल निर्ऋति व कुबेरकी मूर्तियां हैं। अगली प्रतिमामें 'गणपति अभिषेक' दिखाया गया है। इससे अगली पृथ्वीका उद्धार करते भगवान् वराहकी मूर्ति है, जैसी उदयगिरी व एरण तथा महाबलिपुरम्में है। मन्दिरके पृष्ठ भाग पर अश्वारोही रेवन्तकी मूर्ति है, जिनके साथ 'शिकार पार्टी' तथा कुत्ता भी दिखाया गया है। इनके साथ ही सूर्यकी खड़ी प्रतिमा है, जिनके दोनों हाथ खण्डित हो चुके हैं। अगली मूर्तिमें एकमुखी दाढ़ीवाले ब्रह्मा दिखाये गये हैं। इस प्रकारकी ही अन्य प्रतिमा तीर्थराज पुष्करमें भी एक लघु देवालयमें सुरक्षित है। मन्दिरके दाहिनी ओर भी नरसिंह अवतार, पार्वती, विष्णु तथा अपने वाहन मकर पर खड़े वरुणकी मूर्तियाँ हैं। परन्तु इनमें सबसे सुन्दर मध्यमें स्थित दशभुजी देवी महिषासुर-मर्दिनीकी मूर्ति है, जो खड्ग, ढाल, धनुष, बाण आदि अनेक आयुध पकड़े हैं। सामनेवाले एक हाथमें पकड़े त्रिशूलसे वह महिषका वध कर रही है, जिसका कटा सिर उनके बायें पैरके पास पड़ा है और कटे धड़से खड्गधारी महिषासुर मानव रूप लेकर देवीसे युद्ध करनेको तत्पर है। कुशल कलाकारने देवीको घोर संग्राममें लीन होनेपर भी उनके मुख पर शांत भाव ही प्रकट किया है, जो इस मूर्तिकी विशेषता है ( चित्र ४ ) इस प्रकारकी अन्य सुन्दर प्रतिमायें जगतके अम्बिका मन्दिर पर भी विद्यमान हैं।

## पिप्पलाद माता मन्दिर

सूर्य मन्दिरके दाहिनी ओर गाँवके समीप ही पिप्पालाद माताका पुनीत एवं पवित्र मन्दिर है। इस मन्दिरका सामनेका बहुत अधिक भाग खण्डित हो चुका है। मन्दिरके स्तंभ बड़े ही कलात्मक है। इसके गर्भगृहमें एक वेदिका पर कुबेर, महिषासुर-मर्दिनी एवं गणेशकी विशाल प्रतिमायें हैं। धनद कुबेर अपनी पत्नी हरीतिके साथ दाहिने हाथमें चषक तथा बायेंमें धनकी थैली पकड़े बैठे हैं। महिषमर्दिनी तलवार, ढाल, चक्र, घंटा, तथा धनुष लिये हैं और सामनेवाले दाहिने हाथसे महिषका संहार कर रही हैं। इनके बाईं ओर बैठे लम्बोदर गणेश अक्षमाला, परशु, दन्त तथा मोदक लिए हैं। मथुरा तथा उत्तरी भागके अन्य भागोंसे प्राप्त प्रतिमाओंमें साधारणतया कुबेर, गजलक्ष्मी तथा गणेशकी सम्मीलित प्रतिमायें मिली हैं, परन्तु महिषमर्दिनी नहीं मिली हैं। जयपुरके निकट सकरायमाता मन्दिरके विक्रम संवत् ७४९ के एक शिलालेखमें कुबेर, गणेश तथा महिषासुरमर्दिनीकी वन्दना की गई है। सम्भवतः इसीको ध्यानमें रखकर कलाकारने पिप्पलादमाताके मन्दिरमें इन तीनोंकी मूर्तियाँ एक साथ स्थापित करी थी ( चित्र ५ )। इसी मन्दिरके बाहरी भाग पर भी अष्ट दिक्पालों तथा शिवकी मूर्तिके अतिरिक्त एक अन्य महिषासुरमर्दिनीकी सुन्दर प्रतिमा उत्खनित है। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य मन्दिर भी हैं, परन्तु वह बहुत अधिक महत्त्वके नहीं हैं।

## सचियायमाता मन्दिर

राजस्थानमें और विशेषकर मारवाड़ क्षेत्रमें सचियायमाताकी पूजा विशेष रूपसे प्रचलित थी। शिला-लेखोंमें इनके लिए 'सच्चिका' तथा 'संचिका' आदि नामोंका उल्लेख हुआ है। सचियायमाताका मन्दिर ओसियाँ ग्रामके मध्य एक ऊँची पहाड़ी पर बना है। इस मन्दिरकी स्थापना संभवतः आठवीं शताब्दीमें करी गई थी और उस समयसे बारहवीं शताब्दी तक इसके निरन्तर वृद्धि एवं सुधार होते गये। मन्दिरके गर्भगृहमें उस समय काले पत्थरकी रत्नजटित प्रतिमा प्रतिष्ठित है, जो सोलहवीं शताब्दीसे पूर्वकी प्रतीत नहीं होती। इसकी सुरक्षाके लिए चाँदीके द्वार हैं। अब भी प्रति वर्ष इसकी पूजा हेतु सहस्रों भक्तजन आते हैं, परन्तु किंवदन्तियोंके अनुसार कोई भी ओसवाल देवीके शापके कारण ओसियाँमें स्थायी रूपसे नहीं रहता है। प्रस्तुत प्रतिमामें भी देवीका महिषासुरमर्दिनीका ही स्वरूप है।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस मन्दिरमें देवीके सौम्य एवं अघोर रूपोंवाली भी अनेक प्रतिमायें हैं। मन्दिरके बाह्य भागपर अनेक पौराणिक कथाओंके दृश्य अंकित हैं। इनके अतिरिक्त शिव-नटेश, सूर्य, गजानन, वराह, नरसिंह, शेषशायी विष्णु, महिषासुरमर्दिनीकी प्रतिमायें हैं। एक स्थान पर सागर-मन्थनका भी चित्रण है। इनके साथ ही साथ हिन्दूधर्मके विभिन्न देवताओंकी जैसे हरिहर, हरिहरपितामह, लक्ष्मीनारायण, उमामहेश्वर तथा अर्धनारीश्वर-शिवकी भी मूर्तियाँ बना हैं। दिक्पालोंके अतिरिक्त लोक जीवनसे सम्बन्धित भी अनेक दृश्य हैं। मिथुन दृश्योंकी भी झाँकी यहाँ प्रचुर मात्रामें देखनेको मिलती है। मन्दिरमें प्रवेश द्वारके बाईं ओर पवन-पुत्र हनुमान्‌की भी आदमकद प्रतिमा रखी है।

ओसियाके जैन मन्दिरोंमें महावीरजीका मन्दिर विशेष रूपसे महत्त्वपूर्ण है। यहाँ पर पहिलेसे ही जैनियोंके श्वेताम्बर सम्प्रदायकी प्रमुखता थी, जैसा कि इन मूर्तियों को देखनेसे विदित होता है। मन्दिरके अन्दर व बाहरी भाग पर अनेक जैन देवी-देवताओंकी मूर्तियोंके अतिरिक्त सामाजिक जीवनके दृश्य उत्कीर्ण हैं, जो उस समयके लोगोंके जीवनके अध्ययनके लिए बहुत महत्त्वपूर्ण है। जैनमूर्ति कलाके अध्ययनके लिये भी यह मन्दिर विशेष महत्त्वका है, जिसका अभी तक पूर्ण रूपसे अध्ययन नहीं हो पाया है।

इस प्रकार हमें ओसियांमें विभिन्न धर्मोंका समन्वय देखनेको मिलता है। यहां पर न केवल हिन्दू व जैनधर्म ही पनपे थे, वरन् हिन्दूधर्मके विभिन्न सम्प्रदाय जैसे वैष्णव, शैव, शाक्त, सौर, एवं गाणपत्यके अनुयायी भी एक दूसरेके धर्मोंका आदर करते हुए रहते हैं, इस धारणाके अनुसार कि एक ही देवके अनेक रूप हैं, अतः चाहें उसकी पूजा किसी भी रूपमें क्या न की जाये, वह एक ही देवता की होती है :

'एकं सद् विप्रा बहुधा वदन्ति'

—ऋग्वेद, १, १६४, ४६

●



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org